इकाई–3 : भारतीय सिनेमा का इतिहास

इकाई की रूपरेखा
3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 भारत में सिनेमा की शुरुआत और मूक सिनेमा
3.3 सवाक सिनेमा का आरंभिक दौर
3.4 दक्षिण भारतीय भाषाओं का सिनेमा
3.5 पूर्व भारतीय भाषाओं का सिनेमा
3.6 पश्चिम भारतीय भाषाओं का सिनेमा
3.7 उत्तर भारतीय भाषाओं का सिनेमा
3.8 सारांश
3.9 उपयोगी पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

एम. ए. हिंदी व्यावसायिक लेखन के इस आठ क्रेडिट के पाठ्यक्रम 'सिनेमा लेखन' के खंड–1 'सिनेमा का इतिहास' की यह तीसरी इकाई है। इस इकाई का शीर्षक है, 'भारतीय सिनेमा का इतिहास'। इस इकाई में विभिन्न भारतीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का संक्षिप्त लेखा–जोखा प्रस्तुत किया जायेगा।

भारत एक बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक परंपरा का देश है। भारतीय संविधान में 22 भारतीय भाषाओं को भारतीय संविधान की आंठवीं अनुसूची में दर्ज किया गया है। इन 22 भाषाओं के अतिरिक्त कई अन्य भाषाओं और उपभाषाओं में भी फिल्मों का निर्माण होता आया है। भारतीय सिनेमा की परंपरा लगभग एक सौ दस साल पुरानी है। पहली फिल्म 1913 में प्रदर्शित हुई थी जो मूक फिल्म थी। 1913 से 1934 तक 1331 फिल्मों का निर्माण किया गया। लेकिन ये सभी फिल्में बिना आवाज की थी क्योंकि उस समय तक फिल्म के साथ आवाज को जोड़ने की तकनीक का विकास नहीं हुआ था। 1931 में पहली बोलती फिल्म 'आलमआरा' का प्रदर्शन हुआ था जो हिंदुस्तानी यानी हिंदी भाषा में निर्मित हुई थी। उसी साल कुछ अन्य भारतीय भाषाओं में भी फिल्में बनीं और इस तरह भारत की विभिन्न भाषाओं में फिल्में बनने का सिलसिला शुरु हुआ जो आज भी जारी है।

- इस इकाई में आप भारत में सिनेमा माध्यम की शुरुआत कैसे और किन परिस्थितियों में हुई, इसके बारे में विचार करेंगे;
- भारत में बनने वाली मूक सिनेमा का संक्षिप्त परिचय दिया जायेगा। हालांकि मूक सिनेमा को भाषाओं के आधार पर विभाजित नहीं किया जा सकता लेकिन मूक सिनेमा के इतिहास की जानकारी इसलिए जरूरी है ताकि हम आगे विभिन्न भारतीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों को समझ सकेंगे। मूक सिनेमा के दौर में अधिकतर फिल्में धार्मिक और पौराणिक विषयों पर बनी थीं और कुछ ही फिल्में सामाजिक विषयों पर बनी हैं।
- 1931 से सवाक फिल्में बननी शुरू हुईं। 1947 से पहले बनने वाली फिल्मों में मनोरंजन के साथ–साथ सामाजिक सुधार को भी विषय बनाया गया था। 1947 से पहले बनने वाली मूक और सवाक सभी तरह की फिल्में श्वेत–श्याम थीं। एक–दो फिल्में अपवाद रूप में रंगीन भी बनी थी। आप स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले बनने वाली भारतीय फिल्मों की जानकारी प्राप्त करेंगे।
- 1947 से 1964 जिसे नेहरू युग के नाम से जाना जाता है, उसे भारतीय सिनेमा का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। उत्कृष्ट कलात्मक सिनेमा इसी दौरान बना। सातवें दशक में समानांतर सिनेमा का आंदोलन चला जिसने सभी प्रमुख भाषाओं में उत्कृष्ट फिल्में दीं। इसी दौर में मनोरंजन प्रधान फिल्में

भी बनीं।1990 के बनने वाली फिल्मों पर भूमंडलीकरण का गहरा प्रभाव दिखायी देता है। भारतीय सिनेमा के इन विभिन्न दौरों के संदर्भ सिनेमा की विशिष्टता को पहचान सकेंगे।

- भारत में लगभग अंग्रेजी सहित 25 से अधिक भाषाओं में फिल्में बनती हैं। इस इकाई में इनको क्षेत्रीय आधार पर विभाजित कर उनका परिचय दिया गया है। दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और उत्तर भारत की प्रमुख भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का संक्षिप्त लेखा–जोखा प्रस्तुत किया गया है।
- इकाई के अंत में समकालीन भारतीय सिनेमा की प्रवृत्तियों का परिचय दिया गया है। इस तरह इस इकाई में विभिन्न भारतीय भाषाओं बनने वाली प्रमुख प्रवृत्तियों और फिल्मों के बारे में आप संक्षिप्त जानकारी हासिल करेंगे।

3.1 प्रस्तावना

एम. ए. हिदी व्यावसायिक लेखन के पाठ्यक्रम 'सिनेमा लेखन' के पहले खंड 'सिनेमा का इतिहास' की इस तीसरी इकाई 'भारतीय सिनेमा का इतिहास' का अध्ययन करेंगे। इससे पहले की इकाई में आपने विश्व सिनेमा के इतिहास का अध्ययन किया है। इस इकाई में आप भारत में विभिन्न भाषाओं में बनने वाली फिल्मों के बारे में अध्ययन करेंगे।इससे अगली इकाई में हिंदी सिनेमा के इतिहास का अध्ययन करेंगे। इसलिए इस इकाई में हिंदी सिनेमा का परिचय नहीं दिया जायेगा।

भारत में सिनेमा का पहला प्रदर्शन 1896 में हुआ था और उसके दो–तीन साल बाद फिल्मों का निर्माण शुरू हो गया था। पहले लघु फिल्में और बाद में वृत्तचित्रों का निर्माण शुरू हुआ। पहली फीचर फिल्म 1913 में 'राजा हरिश्चंद्र' के नाम से बनी थी। यह श्वेत–श्याम और मूक फिल्म थी जो एक पौराणिक कथा पर आधारित थी। इस फिल्म का निर्माण और निर्देशन दादा साहब फाल्के ने किया था जिन्होंने तीन रंगों की प्रिंटिंग मशीन प्राप्त करने लिए 1909 में जर्मनी की यात्रा की थी। उन्होंने एक साल बाद ही ईसा मसीह पर बनी 'लाइफ ऑफ क्राइस्ट' फिल्म देखी और उनके मन में भी फिल्म बनाने की इच्छा जाग्रत हुई। फिल्मों के प्रदर्शन के लिए विशेष तरह के सिनेमाघर की जरूरत थी और धीरे–धीरे महानगरों और शहरों में सिनेमाघर बनने लगे। कई शहरों में फिल्मों का निर्माण भी होने लगा। इनके अलावा विदेशी फिल्मों का प्रदर्शन भी होने लगा। इस तरह सिनेमा के प्रति लोगों की रुचि बढ़ने लगी। लगभग बीस साल तक फिल्में बिना आवाज के बनी लेकिन 1931 में अर्देशिर इरानी ने पहली सवाक फिल्म 'आलमआरा' बनायी जिसे हिंदी या हिन्दुस्तानी फिल्म कह सकते हैं। उसी साल हिंदी के अलावा तमिल और बांग्ला भाषा में फिल्में बनीं। धीरे–धीरे मूक फिल्मों का बनना बंद हो गया और सिर्फ सवाक फिल्में बनने लगीं।

शुरुआती फिल्में सिर्फ श्वेत–श्याम थीं। लेकिन 1950 के दशक के बाद फिल्में रंगीन भी बनने लगीं। इसी तरह पहले फिल्में केवल 35 एमएम में बनती थीं, बाद में सिनेमास्कोप और 70 एमएम में बनने लगीं। भारत एक बहुभाषी देश है इसलिए यह स्वाभाविक है कि यहां बहुत–सी भाषाओं में फिल्में बनतीं। 1913 से लेकर 1934के मध्य 1300 से अधिक मूक फिल्मों का निर्माण हुआ। हालांकि मुश्किल से दो–चार फिल्में ही अब उपलब्ध हैं। 1931 में जब पहली बार सवाक फिल्म बननी शुरू हुई, उसी वर्ष कुल 28 फिल्में बनीं जिनमें 23 फिल्में हिंदी में, 4 फिल्में बांग्ला में और एक फिल्म तमिल में बनीं। इसके बाद फिल्मों की संख्या बढ़ती गयी। 1947 तक फिल्मों की संख्या दस गुना बढ़ चुकी थी और 2000 तक संख्या बढ़कर एक हजार से ज्यादा हो गयी थी और अब हर साल 1500 से 2000 फिल्में 20 से 25 भाषाओं में बनती हैं। भारत किसी भी अन्य देश की तुलना में सबसे अधिक फिल्में बनाता है।

भारत में केवल कथाचित्र यानी फीचर फिल्में ही नहीं बनती हैं बल्कि न्यूजरील (समाचार चित्र),वृत्तचित्र (डॉक्युमेंटरी), एनिमेशन फिल्में, लघु फिल्में, शैक्षिक फिल्में भी बनती हैं। फिल्मों को प्रदर्शन से पहले

फिल्म प्रमाणन बोर्ड, (जिसे पूर्व में सेंसर बोर्ड कहा गया था) के सामने पेश करना होता है वैसे तो फिल्मों के सेंसर की व्यवस्था औपनिवेशिक शासनकाल में ही आरंभ हो गयी थी। 1920 से फिल्मों को सेंसर बोर्ड से अनापत्ति पत्र लेना पड़ता है तब ही उनका सार्वजनिक प्रदर्शन संभव होता है। सिनेमेटोग्राफी एक्ट, 1952 के मातहत काम करने वाला वैधानिक निकाय 'दि सेंट्रल बोर्ड ऑफ फिल्म सेर्टिफिकेशन' यह अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी करता है। इसे आम प्रचलन में सेंसर बोर्ड कहा जाता है। सेंसर बोर्ड यह भी तय करता है कि फिल्म किस आयु वर्ग के लोगों के देखने लायक है। मसलन जो फिल्म हर आयु वर्ग के लोगों द्वारा देखी जा सकती है उसे यू सेर्टिफिकेट दिया जाता है यानी जिस पर किसी तरह का प्रतिबंध नहीं है। उसके बाद वे फिल्में जिनको बच्चे बड़ों की उपस्थिति में ही देख सकते हैं उन्हें यूए सेर्टिफिकेट दिया जाता है यानी वयस्कों की उपस्थिति में अप्रतिबंधित और तीसरी तरह की फिल्में जिन्हें ए सेर्टिफिकेट दिया जाता है उसे 18 साल या उससे बड़े देख सकते हैं। 18 साल से कम बच्चों के लिए ये फिल्में प्रतिबंधित होती हैं।

फीचर और लघु फिल्में निजी क्षेत्र में बनती हैं। वृत्तचित्र भी आमतौर पर निजी क्षेत्र में बनते हैं। फिल्में बनाना इतना बड़ा व्यवसाय है कि इसके लिए बड़ी पूंजी की जरूरत होती है। स्टूडियो का निर्माण किया जाता है। सिनेमाघरों का निर्माण किया जाता है। विभिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञता रखने वाले तकनीशियनों की जरूरत होती है और कलाकारों की भी। यह उद्योग भी है और कला माध्यम भी। इससे सरकार को कर के रूप में काफी धन प्राप्त होता है। फिल्मों को लेकर कई बार विवाद भी खड़े हो जाते हैं। शांति भंग होने का खतरा भी पैदा हो जाता है। लेकिन सिनेमा पिछले सौ साल से मनोरंजन का सबसे लोकप्रिय और सस्ता माध्यम है और यही कारण है कि उन्हें न केवल सिनेमाघरों में बल्कि टीवी और मोबाइल पर भी देखा जाता है। एक भाषा की फिल्म को डब करके या उसके संवादों के अनुवाद की पट्टी चलाकर दूसरी भाषा के दर्शकों तक भी पहुंचाया जाता है। भारतीय सिनेमा की एक प्रमुख विशेषता उसके गीत और संगीत है जिसकी लोकप्रियता फिल्म से कम नहीं होती। जिसके बारे में आप एक अलग इकाई में अध्ययन करेंगे। अब इस इकाई में विभिन्न भारतीय भाषाओं की फिल्मों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे।

हिंदी फिल्मों का उल्लेख इस इकाई में नहीं किया जायेगा क्योंकि उस पर एक अलग इकाई में आप अध्ययन करेंगे।

3.2 भारत में सिनेमा की शुरुआत और मूक सिनेमा

1895 में पेरिस में ल्यूमिए बंधुओं ने पहली बार फिल्म का सार्वजनिक प्रदर्शन किया था। ये फिल्में सिर्फ एक से दो मिनट लंबी थी। उनमें से एक फिल्म में फैक्टरी से निकलते हुए मजदूरों को दिखाया गया था। एक अन्य फिल्म में एक छोटी सी कथा है: एक बगीचे में पानी देते माली के पाइप पर बच्चा खड़ा हो जाता है जिससे पाइप से पानी निकलना बंद हो जाता है और माली यह नहीं समझ पाता कि पानी रुकने की क्या वजह है।वह पाइप में झांकता है। उसके ऐसा करते ही बच्चा पाइप से हट जाता है और पानी का फव्वारा माली के मुंह पर गिरता है। बच्चे की इस शरारत से माली को गुस्सा आ जाता है। और वह उसके पीछे दौड़ पड़ता है। एक अन्य फिल्म में पेरिस में होने वाली किसी कान्फ्रेंस में शामिल होने के लिए आये लोगों के आगमन को दर्शाया गया है। अगर इन आरंभिक फिल्मों पर विचार करें तो हम आसानी से समझ सकते हैं कि बाद में सिनेमा ने जिन दिशाओं में प्रगति की, ल्यूमिए बंधुओं की फिल्मों में उन सबके मूल रूप विद्यमान थे। ल्यूमिए बंधुओं ने लोगों को एक ऐसे अनुभव से गुजरने का मौका दिया जिसकी वे इससे पहले तक कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उन्होंने उस दुनिया को जिसे

वे जीते और देखते थे और जिसका वे हिस्सा थे, उसको ठीक वैसे ही जीवंत और गतिशील रूप में सिनेमा के पर्दे पर देखा। यह अनुभव एक चमत्कार से कम नहीं था।

सिनेमा का आविष्कार इसीलिए संभव हो सका कि फोटोग्राफी के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ था। फोटोग्राफी में किसी यथार्थ क्षण को स्थिर रूप में रचा जा सकता था। लेकिन सिनेमा ने यथार्थ की गतिशीलता को पुनरुत्पादित करना संभव बनाया। फिल्म एक दृश्य माध्यम है। एक ऐसा माध्यम है जिसमें यथार्थ को हूबहू पेश किया जा सकता है। यथार्थ को हूबहू पेश करने की इस क्षमता ने यह प्रश्न खड़ा किया कि क्या सिनेमा यथार्थ का अनुकरण है? यदि वह यथार्थ का अनुकरण है तो कलाकार के लिए रचनात्मकता की संभावना कम हो जाती है। कलात्मकता के लिए ज्यादा अवसर वहीं हो सकते हैं जहां कलाकार के लिए अपनी भावनाओं को अपने उद्देश्यों के अनुरूप ढालने की पर्याप्त संभावना निहित हो। वह उन्हें अपनी सर्जनात्मक कल्पनाशीलता के अनुरूप ढाल सके। उनका अमूर्तन कर सके। सिनेमा माध्यम में जो तकनीकी परिवर्तन हुए उसके कारण यथार्थ का अनुकरण करने की विवशता फिल्मकारों के लिए जरूरी नहीं रही। 1915 में ही अमरीकी फिल्मकार डी. डब्ल्यू. ग्रिफिथ ने अपनी फिल्मों 'दि बर्थ ऑफ ए नेशन' और 'इनटोलेरेंस' के माध्यम से यह साबित कर दिया कि वह यथार्थ को अपनी भावनाओं और उद्देश्यों के अनुरूप पेश कर सकता है। ग्रिफिथ की फिल्मों ने यह साबित किया कि फिल्म माध्यम का अपने समय और समाज से गहरा संबंध होता है।

भारत में सिनेमा का विकास विश्व सिनेमा के लगभग समानांतर हुआ। ल्यूमिए बंधुओं ने भारत में अपनी फिल्मों का प्रदर्शन एक साल बाद ही मुंबई में किया था। 7 जुलाई 1896 की शाम को छह बजे मुंबई के वाटसन होटल में इन फिल्मों का प्रदर्शन किया गया था। इन प्रदर्शनों ने भारतीय लोगों में भी सिनेमा के प्रति आकर्षण पैदा कर दिया और उन्नीसवीं सदी के समाप्त होते–होते सिनेमा के निर्माण की तरफ भी भारत ने अपना कदम बढ़ा लिया था। 1896 में फिल्मों का जो प्रदर्शन हुआ था उसे देखने वालों में हरिश्चंद्र सखाराम भाटवडेकर भी थे। भाटवडेकर स्थिर फोटोग्राफी की कला में प्रवीण थे। उन्होंने वह कैमरा मंगाया जिस तरह के कैमरे से ल्यूमिए बंधु अपनी फिल्में बनाते थे। उन्होंने मुंबई के ही हैंगिग गार्डन में एक कुश्ती का आयोजन किया और इस कैमरे से उन्होंने अपनी पहली फिल्म बनाई। इस फिल्म को धोने के लिए इंग्लैंड भेजा गया और बाद में 1899 में इसको अन्य यूरोपीय फिल्मों के साथ भारत में प्रदर्शित किया गया। इसके बाद 1901 में पहला वृत्तचित्र भारत में निर्मित हुआ जिसमें एक भारतीय विद्यार्थी के विदेश से पढ़कर लौटने के दृश्य को फिल्माया गया था। मुंबई के बंदरगाह पर र.ग. परांजपे का स्वागत करने के लिए जो लोग एकत्र हुए थे उनके द्वारा किए गए स्वागत को इस फिल्म में प्रस्तुत किया गया था। भाटवडेकर के बाद जिस दूसरे भारतीय का नाम सामने आता है, वह है हीरालाल सेन (1866–1917) जिन्होंने बीसवीं सदी में कई फिल्मों का निर्माण किया और भारत में जगह–जगह घुमकर फिल्मों का प्रदर्शन भी किया।

भारत में मूक सिनेमा

भारत की पहली फीचर फिल्म का निर्माण दादा साहब फालके ने किया था। उनकी फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का सार्वजनिक प्रदर्शन 3 मई 1913 को मुंबई में किया गया था जिसे भारत की पहली कथा फिल्म होने का गौरव प्राप्त है। 'राजा हरिश्चंद्र' से एक साल पहले 18 मई, 1912 को 'पुंडालिक' फिल्म का प्रदर्शन किया गया था। 8000 फुट लंबी इस फिल्म को दरअसल, इसी नाम के नाटक के रंगमंचीय प्रदर्शन के दौरान रिकार्ड किया गया था। यह रंगमंच प्रदर्शन मुंबई के मंगलदास वाडी स्थित एक नाट्यगृह में 'संगीत मंडली' नामक नाट्य समूह द्वारा किया जा रहा था। इसका निर्देशन रामचंद्र टोर्नी ने किया था जो दादा साहब टोर्ने के नाम से जाने जाते थे। लेकिन पहली फिल्म का निर्माण और

उसके सार्वजनिक प्रदर्शन की शुरुआत 'राजा हरिश्चंद्र' से ही मानी जाती है क्योंकि यही वह फिल्म थी, जो कथा फिल्म के रूप में ही कल्पित की गयी और उसी रूप में निर्मित हुई थी।

1912–13 से 1930 तक बनने वाली सभी फिल्में मूक और श्वेत–श्याम थीं। 1931 में पहली सवाक फिल्म 'आलमआरा' का प्रदर्शन किया गया। इसके बाद से फिल्में ज्यादातर सवाक बनने लगीं और 1934 तक आते–आते मूक फिल्मों का निर्माण पूरी तरह से बंद हो गया। 22–23 साल की इस अवधि में कुल 1331 मूक फिल्मों का निर्माण हुआ। शुरू के दस सालों में लगभग दो सौ फिल्मों का निर्माण हुआ था जबकि अकेले 1931 में 206 मूक फिल्मों का निर्माण हुआ। मूक फिल्मों के पूरे दौर में 22 फिल्में 1500 फुट से कम लंबाई की थी और शेष 1301 फिल्में 1500 फुट से ज्यादा लंबाई की थीं। इनके अतिरिक्त 8 ऐसी फिल्में भी थीं जो दो या दो से अधिक भागों में बनाई गयी थीं। जैसे–जैसे फिल्मों की संख्या बढ़ती गयी और फिल्मकारों के आत्मविश्वास में बढ़ोतरी होती गयी, फिल्मों की लंबाई भी बढ़ती गयी। आरंभ में फिल्मों के निर्माण पर प्रति फिल्म दस हजार से पंद्रह हजार रूपये खर्च होते थे जो धीरे–धीरे बढ़ने लगे। 1918 तक फिल्मों में प्रतिवर्ष एक लाख रुपये निवेश किये जाते थे, जो दस वर्ष के अंदर बढ़कर ढाई करोड़ तक पहुंच गया था। 1913 में 'राजा हरिश्चंद्र' के समय भारत में कुल 40 सिनेमाघर थे जो 1931 तक आते–आते बढ़कर 451 हो गये थे। लेकिन इनमें वे सिनेमाघर भी शामिल थे जो अस्थायी तौर पर फिल्मों का प्रदर्शन करते थे। यह भी गौरतलब है कि उस पूरे दौर में जितनी फिल्में भारत में बनती थीं, उससे कई गुना ज्यादा फिल्में विदेशों से आयात की जाती थीं। सिनेमाघरों की बड़ी संख्या का कारण यही था।

मूक फिल्मों के पूरे दौर में अधिकतर फिल्में या तो पौराणिक या धार्मिक या ऐतिहासिक कथाओं पर आधारित होती थीं। कुछ फिल्में अरब, यूरोप आदि की लोकप्रिय कहानियों पर भी बनी थीं। लेकिन सामाजिक विषयों पर फिल्मों का निर्माण बहुत ही कम हुआ। विदेशी फिल्मों के व्यापक प्रदर्शन के कारण फिल्मों के दर्शक तो बढ़ गये लेकिन फिल्मों में काम करने को अच्छा नहीं समझा जाता था। खासतौर पर स्त्रियों के लिए। इसलिए पहली फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' में स्त्री की भूमिका भी पुरुष अभिनेताओं ने निभायी थी। लेकिन दादा साहब फाल्के की दूसरी फिल्म 'भस्मासुर मोहिनी' में पहली स्त्री कलाकार ने काम किया था। उसका नाम कमला था और वह एक मराठी स्त्री थी। उसे भारतीय फिल्मों की पहली नायिका कहा जा सकता है। कमला की मां दुर्गाबाई ने भी इस फिल्म में काम किया था।

शुरू के सालों में बनने वाली ज्यादातर फिल्में हिंदू पुराण कथाओं पर आधारित होती थीं। 1921 में बनी फिल्म 'बिलेत फेरात' (इंगलैंड रिटर्न्ड) पहली सामाजिक फिल्म थी जिसमें विलायत से लौटे व्यक्ति को फिल्म का विषय बनाया गया था। यह एक व्यंग्यात्मक फिल्म थी जिसका निर्माण धीरेंद्रनाथ गांगुली ने किया था। वे इस फिल्म के नायक भी थे और एक अभिनेता के रूप में यह उनकी पहली फिल्म थी। 1924 में बनी फिल्म 'बीसवीं सदी' में मुंबई के पूंजीपति वर्ग की आलोचना की गयी थी। 1925 में बनी फिल्म 'महाराची पोर' एक सुधारवादी फिल्म थी जिसमें एक अछूत लड़की की शादी एक ब्राह्मण से होती है। यह उस दौर में चल रहे समाज सुधार आंदोलन का प्रभाव था। 1925 में बनी 'सावकारी पाश' किसानों की ऋण समस्या पर आधारित थी। इस फिल्म के नायक वी. शांताराम थे। मूक सिनेमा के दौर में ही बाबूराव पेंटर जैसे फिल्मकार उभर चुके थे जिनके लिए सिनेमा सिर्फ मनोरंजन का माध्यम नहीं था बल्कि वह सामाजिक संदेश देने का माध्यम भी था। 'सावकारी पाश' इन्हीं बाबूराव पेंटर के निर्देशन में बनी थी। 1930 और 1940 के दशक में मराठी और हिंदुस्तानी फिल्मों को ऊंचाइयों की ओर ले जाने वाले एस. फत्तेलाल, विष्णुपंत दामले और वी. शांताराम इन्हीं बाबूराव पेंटर की देन थे। इन सभी ने अपने फिल्मी जीवन की शुरुआत मूक सिनेमा के दौर में ही कर दी थी और इस दौर की कई फिल्मों से ये जुड़े थे।

3.3 सवाक सिनेमा का आरंभिक दौर

भारत की पहली सवाक फिल्म 'आलमआरा' का सार्वजनिक प्रदर्शन 14 मार्च 1931 को मुंबई के मैजेस्टिक सिनेमा में हुआ था। इस फिल्म का निर्माण इंपीरियल मुवीटोन नामक फिल्म कंपनी ने किया था। इसकी स्थापना आर्देशिर एम. इरानी ने सितंबर, 1926 में की थी। 'आलमआरा' के निर्देशक स्वयं आर्देशिर इरानी थे। आर्देशिर इरानी ने जोसेफ डेविड के साथ मिलकर पटकथा भी लिखी थी। फिल्म का संगीत फिरोजशाह एम. मिस्त्री और बी. ईरानी ने दिया था। आलमआरा की भूमिका जुबैदा ने निभाई थी और इनके अलावा मास्टर विट्ठल, पृथ्वीराज कपूर ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएं निभायी थीं। 'आलमआारा' पारसी थियेटर के नाटक पर आधारित हिंदुस्तानी (हिंदी) फिल्म थी जो काल्पनिक इतिहास कथा पर आधारित है और इसमें कमोबेश वे सभी तत्व हैं जो आरंभिक लोकप्रिय फिल्मों के हुआ करते थे। एक बूढ़े राजा की दो पत्नियां और अपनी संतान को राज्य का उत्तराधिकारी बनाने के लिए साजिश और संघर्ष इस फिल्म की कहानी का भी आधार है। फिल्म में कुल सात गीत थे जिनमें से कुछ ही अब उपलब्ध हैं। इस फिल्म के गीतों और संवादों की भाषा उर्दू के ज्यादा नजदीक है। लेकिन कोशिश बोलचाल की भाषा का प्रयोग करने की है जो पारसी थियेटर के नाटकों का भी आदर्श था।

सवाक फिल्मों के निर्माण में भी कई फिल्म कंपनियां सक्रिय थीं। जिनमें चंदुलाल शाह की रंजीत मुवीटोन, वी. शांताराम और उनके साथियों की प्रभात फिल्म्स, बी.एन. सरकार की न्यू थियेटर्स और हिमांशु राय की बोंबे टॉकीज विशेष उल्लेखनीय है। इन कंपनियों के बैनर तले सवाक फिल्मों के पहले दशक की कई महत्त्वपूर्ण फिल्में बनी थीं। ये फिल्में कई अर्थों में मूक फिल्मों के दौर की फिल्मों से अलग थीं। मूक फिल्मों के दौर में ज्यादातर फिल्में धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक और ऐतिहासिक कल्पना पर आधारित होती थीं। मूक फिल्मों के पहले दशक तक बनने वाली अधिकतर फिल्में ऐसी ही थीं। लेकिन जैसे–जैसे आजादी का आंदोलन तेज होता गया और उनमें जनता की भागीदारी बढ़ती गयी वैसे–वैसे फिल्मों के मिजाज में भी अंतर आना शुरू हुआ। सेंसर बोर्ड की स्थापना के कारण फिल्मकारों के लिए राजनीतिक फिल्में बनाना मुमकिन नहीं था, इसलिए अब सामाजिक दृष्टि से जागरूक फिल्में बनने लगी थीं। ऐतिहासिक फिल्मों में भी यह जागरूकता नजर आती थी। इस दौर में भक्ति आंदोलन से जुड़े भक्त कवियों और संतों पर भी कई फिल्में बनीं।

फिल्मों को सामाजिक उद्देश्य से जोड़ने और उसे प्रगतिशील नजरिए से पेश करने का काम न्यू थियेटर्स और प्रभात फिल्मस ने किया था। न्यू थियेटर्स की स्थापना कोलकाता में बिरेंद्रनाथ सरकार (1901–1980) ने 1931 में की थी। न्यू थियेटर्स ने स्थापना के दूसरे साल ही अपनी पहली बांग्ला फिल्म 'चंडीदास' (1932) का निर्माण किया। इस फिल्म के निर्देशक देवकी बोस (1898–1971) थे जिन्हें भारत के महान फिल्मकारों में माना जाता है। फिल्म बांग्ला भक्त कवि चंडीदास के जीवन पर आधारित थी। यह फिल्म चंडीदास और एक धोबन रामी के बीच की प्रेमकथा पर आधारित है। फिल्म का संगीत प्रख्यात संगीतकार रायचंद बोराल (1903–1981)ने दिया था और छायांकन नितिन बोस (1897–1986) ने न्यू थियेटर्स अपनी फिल्मों को बांग्ला के साथ प्रायः हिंदी में भी बनाते थे।

न्यू थियेटर्स ने 1933 में मीरा के जीवन पर आधारित फिल्म 'मीराबाई' बनायी। इस फिल्म का निर्माण बांग्ला और हिंदी में साथ–साथ किया गया। इन दोनों फिल्मों के निर्देशक देवकी बोस ही थे और दोनों फिल्मों का छायांकन नितिन बोस और संगीत रायचंद बोराल ने दिया था। हिंदी फिल्म 'राजरानी मीरा' के नाम से बनी थी और इसमें मीरा की भूमिका दुर्गा खोटे ने निभायी थी। यह गौरतलब है कि 1933 तक हिंदी फिल्मों के कई कलाकार, लेखक और गायक न्यू थियेटर्स के साथ जुड़ गये थे जिनमें के.एल. सहगल, पृथ्वीराज कपूर, दुर्गा खोटे, पहाड़ी सान्याल, आगा हश्र कश्मीरी प्रमुख हैं। कुंदनलाल सहगल ने

न्यू थियेटर्स की बहुत सी फिल्मों में नायक की भूमिका निभायी थी। 1936 में बनी फिल्म 'देवदास' ने उन्हें अभिनेता और गायक के रूप में स्थापित कर दिया था। यह फिल्म भी न्यू थियेटर्स ने बांग्ला और हिंदी दोनों भाषाओं में साथ–साथ बनायी थी और इसका निर्देशन पी. सी. बरुआ (1903–1951) ने किया था। इसके बांग्ला संस्करण में देवदास की भूमिका स्वयं बरुआ ने निभायी थी। शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के इसी नाम के लोकप्रिय उपन्यास पर आधारित इसके हिंदी संस्करण के संवाद और गीत केदार शर्मा (1910–1999)ने लिखे थे और छायांकन बिमल राय (1909–66) का था। इस फिल्म ने केदार शर्मा को अपार लोकप्रियता दी और लेखक और गीतकार के रूप में वे स्थापित हो गये। बाद में उन्होंने कई फिल्मों का निर्माण और निर्देशन भी किया। बिमल राय भी जिन्होंने न्यू थियेटर्स से अपने केरियर की शुरुआत की थी, जल्दी ही निर्देशन के क्षेत्र में प्रवेश कर गये और बाद में हिंदी फिल्मों के महान फिल्मकार के रूप में ख्यात हो गये।

न्यू थियेटर्स की दो फिल्मों को बिमल राय ने दोबारा बनाया था। 1933 में बनी 'यहूदी की लड़की' को उन्होंने 1958 में 'यहूदी' के नाम से बनाया था। 'यहूदी की लड़की' में के. एल. सहगल ने काम किया था और 'यहूदी' में दिलीप कुमार ने। इसी तरह न्यू थियेटर्स की फिल्म 'देवदास' में भी के. एल. सहगल ने नायक की भूमिका निभायी थी और इस फिल्म को बिमल रॉय ने 1955 में फिर से बनाया था और इसमें नायक दिलीप कुमार थे। यथार्थपरक और भावपूर्ण अभिनय की जो परंपरा के. एल. सहगल ने डाली थी, उसे उत्कर्ष पर ले जाने का श्रेय दिलीप कुमार को जाता है। देवकी बोस, नितिन बोस और पी.सी. बरुआ के निर्देशन में बनी फिल्मों ने ही न्यू थियेटर्स को प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा प्रदान की। न्यू थियेटर्स से जुड़े कलाकारों, निर्देशकों और संगीतकारों के कारण न्यू थियेटर्स लगभग एक दशक तक सिनेमा की दुनिया में छाया रहा। लेकिन 1940 के बाद न्यू थियेटर्स से जुड़े बहुत से कलाकार विशेष रूप से जो हिंदी फिल्मों से जुड़े थे, मुंबई की ओर प्रस्थान कर गये।

जिस समय कोलकाता में न्यू थियेटर्स शिखर पर था, ठीक उसी समय प्रभात फिल्म्स ने भी मराठी और हिंदी में कई उल्लेखनीय फिल्में दीं। प्रभात फिल्म कंपनी की बात करने से पहले कोल्हापुर की महाराष्ट्र फिल्म कंपनी का उल्लेख करना जरूरी है जिसकी स्थापना मूक सिनेमा दौर के महान फिल्मकार बाबूराव पेंटर (1890–1954) ने की थी। इन्हीं बाबूराव पेंटर की शागिर्दी में व्ही. शांताराम (1901–1990), एस. फत्तेलाल (1897–1964), विष्णुपंत दामले (1892–1945) और एस. धायबर (1890–1978) ने सिनेमा के कला और तकनीकी पक्षों का प्रशिक्षण हासिल किया था और इस बात को भी समझा था कि सिनेमा सिर्फ मनोरंजन का माध्यम नहीं है। प्रभात फिल्म कंपनी की स्थापना 1929 में कोल्हापुर में इन चार फिल्मकारों और सीतारामपंत कुलकर्णी ने मिलकर की थी। बाद में यह कंपनी पुणे आ गयी और यहां प्रभात स्टूडियो की स्थापना हुई। इसी प्रभात स्टूडियो में आजकल फिल्म और टेलीविजन संस्थान स्थापित है। प्रभात फिल्म्स भी मराठी और हिंदी दोनों भाषाओं में फिल्में बनाते थे। कुछ फिल्में जैसे चंद्रसेना उन्होंने हिंदी और मराठी के साथ–साथ तमिल में भी बनायी थी। प्रभात फिल्म कंपनी की पहली फिल्म 'अयोध्याचा राजा' थी जो 1932 में बनी थी। यह फिल्म मराठी के साथ–साथ हिंदी में भी बनी थी और इसका नाम था 'अयोध्या का राजा'। फिल्म का निर्देशन व्ही. शांताराम ने किया था। शुरू में प्रभात फिल्म ने भी पौराणिक और ऐतिहासिक कथानकों पर फिल्में बनायीं जिनमें 'सिंहगढ़' (1933), 'अमृतमंथन' (1934), 'चंद्रसेना' (1935), 'अमर ज्योति' (1936) और 'संत तुकाराम' (1936) लोकप्रिय भी हुईं।प्रभात की पौराणिक और ऐतिहासिक फिल्में भी कोई न कोई सामाजिक संदेश देती थी। 'संत तुकाराम' जिसका निर्देशन विष्णुपंत दामले और एस. फत्तेलाल ने किया था, मध्ययुगीन संत कवि तुकाराम के जीवन पर आधारित थी। 'चंडीदास' की तरह यह फिल्म भी ब्राह्मणवाद और जातिवाद के विरोध में बनी थी। प्रभात फिल्म्स ने1933 में 'सैरंध्रि' नाम से फिल्म बनायी जो भारत की पहली रंगीन

फिल्म थी जिसकी प्रोसेसिंग जर्मनी में हुई थी और प्रिंट भी वहीं तैयार हुए थे। लेकिन यह फिल्म कामयाब नहीं हुई थी।

प्रभात फिल्म ने समकालीन विषयों पर खासतौर पर सामाजिक बुराइयों के विरोध में कई फिल्में बनायीं। मसलन, अनमेल विवाह पर 'कंकु'/'दुनिया ना माने', वेश्यावृत्ति पर 'मानुस'/'आदमी' (1939), सांप्रदायिक एकता पर 'शेजारी'/'पड़ोसी' (1941) आदि। प्रभात फिल्म की अधिकतर फिल्मों का निर्देशन व्ही. शांताराम ने किया था। लेकिन 1942 में व्ही. शांताराम प्रभात फिल्म से अलग हो गये और उसी वर्ष उन्होंने मुंबई में राजकमल कलामंदिर की स्थापना की। प्रभात फिल्म के बैनर तले उसके बाद भी फिल्में बनती रहीं लेकिन 1945 में विष्णुपंत दामले की मृत्यु के बाद कंपनी की स्थिति डांवाडोल हो गयी और आखिरकार 1953 में कंपनी को ताला लग गया। प्रभात की अन्य महत्त्वपूर्ण फिल्मों में 'संत ज्ञानेश्वर' (1940) और 'रामशास्त्री' (1944) का उल्लेख किया जा सकता है।

1934 में हिमांशु राय और देविका रानी ने मुंबई में 'बॉम्बे टॉकीज' की स्थापना की। जिसने तकरीबन 40 फिल्मों का निर्माण किया था। 1940 में हिमांशु राय की मृत्यु के बाद देविका रानी ने स्टुडियो का संचालन किया। जब देविका रानी ने फिल्मों से संन्यास ले लिया तो बोंबे टॉकीज शशधर मुखर्जी और अशोक कुमार के हाथ में आ गया। 1953 में बॉम्बे टॉकीज हमेशा के लिए बंद हो गया। देविका रानी, अशोक कुमार, लीला चिटनीस, मधुबाला और दिलीप कुमार को सामने लाने का श्रेय बॉम्बे टॉकीज को है।

दक्षिण भारत में पहली सवाक फिल्म 1934 में नरसिंह राव ने तेलुगु भाषा में 'सीता कल्याणम'नाम से बनायी थी। इसी वर्ष के.सुब्रह्मण्यम के निर्देशन में 'पावालक्कोडी' बनी।1936 में सोहराब मोदी ने मिनर्वा मुवीटोन की स्थापना की और 1939 में बी. एन. रेड्डी ने वॉहिनी पिक्चर्स की स्थापना की और एस.एस. वासन ने जेमिनि स्टुडियो की स्थापना की। ये और ऐसी कई फिल्म निर्माण कंपनियां स्थापित हुईं और जिन्होंने बाद में कई महत्त्वपूर्ण फिल्में बनायीं।

भारत में केवल मुंबई में ही फिल्में नहीं बनती थीं। मुंबई के अलावा, लाहौर, कोलकाता, चौन्नै, कोल्हापुर और पुणे मुख्य केंद्र थे जहां फिल्मों का निर्माण होता था। आजादी के बाद देश में मुंबई, कोलकाता, हैदराबाद और चौन्नै मुख्य केंद्र बन गये। केरल में उदय स्टुडियो के नाम से पहला स्टुडियो बना था। 1947 में ही सत्यजित राय, चिदानंददास गुप्त आदि ने मिलकर कलकत्ता फिल्म सोसाइटी की स्थापना की जिसका मकसद लोकप्रिय और मनोरंजक फिल्मों से अलग ऐसी फिल्मों को प्रोत्साहन देना था जो रचनात्मक और कलात्मक दृटि से उत्कृष्ट हो। धीरे–धीरे फिल्म सोसाइटी आंदोलन सारे देश में फैल गया।

स्वातंत्र्योत्तर भारतीय सिनेमा और शासकीय नीति

1947 में देश आजाद होने के बाद देश की नयी सरकार ने सिनेमा माध्यम को प्रोत्साहन देने के लिए कई कदम उठाये। 1949 में फिल्म्स डिविजन की स्थापना की गयी। सिनेमेटोग्राफ एक्ट 1918 में इसी वर्ष संशोधन किया गया और एक नया सेंसरशिप वर्गीकरण लागू किया गया। मध्य प्रांत में सिनेमा पर लगने वाला मनोरंजन कर बढ़ाकर 50 फीसदी कर दिया गया। पश्चिम बंगाल में यह कर बढ़ाकर 75 प्रतिशत कर दिया गया। फिल्म निर्माताओं ने करों में इस वृद्धि का विरोध किया। 1949 में ही भारत सरकार ने एस. के. पाटिल की अध्यक्षता में सिनेमा से संबंधित सभी पक्षों पर विचार करने के लिए फिल्म इंक्वारी कमिटी गठित की। इस समिति ने फिल्मों द्वारा फैलायी जा रही अपसंस्कृति की तीखी आलोचना की, फिल्म निर्माण में काले धन के उपयोग और स्टार सिस्टम को लेकर भी इस समिति की

रिपोर्ट में आलोचना की गयी थी। समिति ने राज्य निवेश की भी सिफारिश की थी। इस समिति ने फिल्म संस्थान और फिल्म आर्काइव की स्थापना की भी संस्तुति की गयी। हालांकि इनकी स्थापना लगभग एक दशक बाद ही मुमकिन हो सकी।

1952 में फिल्मस डिविजन ने भारत का पहला अंतरराष्ट्रीय फिल्म फेस्टिवल का आयोजन मुंबई, मद्रास और कलकत्ता में किया गया। इसी वर्ष भारतीय सिनेमेटोग्राफ एक्ट, 1952 संसद में पारित किया गया जिसने 1918 के एक्ट का स्थान लिया। 1954 में पहली बार राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्रदान किये गये जो बाद में हर वर्ष दिये जाने लगे।इस वर्ष सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार मराठी फिल्म श्यामची आई' को मिला और ख्वाजा अहमद अब्बास की फिल्म 'मुन्ना' को द्वितीय पुरस्कार दिया गया। 1955 में चिल्ड्रन फिल्म सोसाइटी की स्थापना की गयी। 1960 में फिल्म वित्त निगम की स्थापना की गयी और इसी वर्ष पुणे में फिल्म इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया की स्थापना की गयी जो बाद में फिल्म एंड टेलीविजन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया के नाम से जाना गया। 1964 में पुणे में ही नेशनल फिल्म आर्काइव ऑफ इंडिया की स्थापना की गयी।

आजादी के बाद कुछ सालों तक ऑल इंडिया रेडियो पर फिल्मी गानों के प्रसारण पर प्रतिबंध लगा रहा। उस समय सरकार का यह सोचना था कि फिल्मी गानों से भारत की शास्त्रीय संगीत और गायन परंपरा पर बुरा असर पड़ेगा। लेकिन बाद में सरकार को अपनी गलती का एहसास हुआ और विविध भारती के नाम से एक नया रेडियो चैनल शुरू किया गया जिस पर फिल्मी गानों का प्रसारण भी होने लगा।

जब देश आजाद हुआ तब भारत में प्रतिवर्ष 250 से अधिक फिल्मों का निर्माण हो रहा था और सबसे अधिक फिल्में हिंदी भाषा में बन रही थी। धीरे–धीरे फिल्मों की संख्या बढ़ने लगी। विशेष रूप से दक्षिण की भाषाओं में फिल्म निर्माण में तेज गति आने लगी। अगले तीस सालों में प्रतिवर्ष 550 से अधिक फिल्में बनने लगीं और सदी के अंत तक यह संख्या लगभग एक हजार तक पहुंच गयी थी। आज भारत दुनिया में सबसे अधिक भाषाओं में सबसे अधिक फिल्म बनाने वाला देश है। आगे हम विभिन्न भारतीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे।

3.4 दक्षिण भारतीय भाषाओं का सिनेमा

दक्षिण भारत की चार प्रमुख भाषाएं हैं : तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम। इन चारों भाषाओं में प्रतिवर्ष हिंदी के अलावा किसी भी अन्य भारतीय भाषाओं से अधिक फिल्में बनती हैं। दक्षिण में सबसे अधिक फिल्में चैन्नै में बनती रही हैं जिसे पहले मद्रास के नाम से जाना जाता था। यहां कई प्रख्यात स्टुडियो हैं जहां न केवल दक्षिण भाषा की फिल्मों का निर्माण होता है बल्कि हिंदी और दूसरी भाषाओं की फिल्में भी बनती हैं। अब दक्षिण का एक बड़ा केंद्र हैदराबाद की फिल्म सिटी है जिसमें भी काफी फिल्मों का निर्माण होता है।

तमिल सिनेमा

तमिल फिल्मों का निर्माण मूक सिनेमा के युग से ही आरंभ हो गया था। फिल्मकार के सुब्रहम्ण्यम जिनके नाम का उल्लेख पहले किया जा चुका है, उन्होंने 1938 में प्रेमचंद के उपन्यास 'सेवासदन' पर तमिल में इसी नाम से फिल्म बनायी थी। इस फिल्म में नायिका की भूमिका महान गायिका एम एस सुब्बुलक्ष्मी ने निभायी थी। तमिल में मीराबाई पर भी 'मीरा' नाम से फिल्म बनी थी। इस फिल्म में भी एम एस सुब्बुलक्ष्मी ने मीरा की भूमिका निभायी थी। तमिल फिल्मों पर तमिलनाडु के द्रविड़ आंदोलन का

गहरा असर था जो एक राजनीतिक और सामाजिक आंदोलन था। द्रविड़ मुनेत्र कड़गम के कई बड़े नेता जिनमें सी अन्नादुराई, एम करुणानिधि, एम जी रामंचद्रन का खासतौर पर नाम लिया जा सकता है, सिनेमा से भी जुड़े थे। ये तीनों तमिलनाडु के मुख्यमंत्री भी रहे। एम जी रामचंद्रन तमिल सिनेमा के सबसे लोकप्रिय कलाकार थे। इनके अलावा शिवाजी गणेशन, जेमिनी गणेशन, जयललिता तमिल सिनेमा के लोकप्रिय कलाकार थे। जयललिता भी तमिलनाडु की मुख्यमंत्री रहीं। तमिल फिल्में तमिल अस्मिता और वहां की संस्कृति, भाषा और साहित्य का प्रतिनिधित्व करती है। हालांकि हिंदी की मनोरंजक फिल्मों की तरह की फिल्में भी तमिल में बनती रही है।तमिल सिनेमा के एक प्रमुख निर्देशक के बालचंदर की फिल्म 'तन्नीर तन्नीर' (1982) पानी की समस्या पर बनी एक बहुत ही प्रभावशाली फिल्म थी। तमिल सिनेमा के कुछ प्रमुख फिल्मकार थे – के सुब्रह्मण्यम (सेवासदन, भक्तचेता और त्यागभूमि), एस एस वासन (चंद्रलेखा, संसारम, अपूर्व सहोदरगल), ए भीमसिंह (अम्मैयप्पन, पतिभक्ति, पासमलर), एल वी प्रसाद (कल्याणम् पन्नी पार, मिस्सिम्मा), बालू महेंद्र (कोकिला, वीडु, संध्यारागम), मणि रत्नम (नायकन, अग्नि नक्षत्रम, बॉम्बे, रोजा)। उपर्युक्त सभी फिल्मकारों ने हिंदी में भी फिल्में बनायी हैं।

तेलुगु सिनेमा

तेलुगु फिल्मों का इतिहास भी उतना ही पुराना है। मूक सिनेमा के दौर में तेलुगु फिल्मकारों ने अधिकतर धार्मिक फिल्में बनायीं। जो सवाक फिल्मों के दौर में भी चलती रही। तेलुगु फिल्मों के आरंभिक निर्माताओं में एल वी प्रसाद का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्हें एस वी रंगाराव और एन टी रामाराव को फिल्मों में लाने का श्रेय है। तेलुगु सिनेमा का संबंध आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्यों से संबंधित हैं। अधिकतर तेलुगु फिल्में हैदराबाद की फिल्म सिटी में बनती हैं। तेलुगु भाषा की पहली सवाक फिल्म 'भक्त प्रहलाद' थी जो 1932 में बनी थी और इसका निर्देशन एच एम रेड्डी ने किया था।पौराणिक, सामाजिक और मनोरंजक फिल्में बनने के साथ–साथ समानांतर और कला फिल्मों का निर्माण भी हुआ है। इनमें 'दासी' (1988), 'तिलादनम' (2000), 'वनजा' (2006) का नाम लिया जा सकता है। मल्लिश्वरी (1953) फिल्म जिसका निर्देशन बी एन रेड्डी ने किया था, जिसे चीन सहित कई देशों में लोकप्रियता मिली थी। बी एन रेड्डी को दादा साहब फाल्के पुरस्कार मिला था। एन टी रामाराव तेलुगु फिल्मों के लोकप्रिय अभिनेता थे जिन्होंने तेलुगु देशम पार्टी बनायी और आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री रहे। रामाराव ने अधिकतर पौराणिक और धार्मिक फिल्मों में काम किया था।

1977 में ही मृणाल सेन ने प्रेमचंद की प्रख्यात कहानी कफन पर तेलुगु भाषा में 'ओकाउरीकथा'नामसेफिल्म बनायी। इसके लिए मृणाल सेन ने कहानी में तेलंगाना क्षेत्र की विशिष्टता के अनुरूप बदलाव भी किये हैं। कहानी के पात्र घीसु और माधव यहां वैंकया और किस्टैया हैं जिनकी भूमिका दक्षिण के प्रख्यात अभिनेता वासुदेव राव और नारायण राव ने क्रमशः निभायी है। माधव की पत्नी बुधिया यहां किस्टैया की पत्नी निलम्मा है जिसकी भूमिका ममता शंकर ने निभायी है। मृणाल सेन ने इस कहानी का फिल्मांकन कहानी की अपनी समझ के अनुसार किया है। इसे एक परिवार की कहानी तक सीमित न रखकर ग्रामीण व्यवस्था में गरीब किसानों और खेत मजदूरों के शोषण और उत्पीड़न से जोड़ दिया है। लेकिन निलम्मा के प्रति उसके श्वसुर और पति के रवैये द्वारा पितृसत्ता को भी आलोचना में शामिल किया गया है। वैंकया (यानी मूल कहानी का घीसु) का चरित्र भी फिल्म में कफन से थोड़ा भिन्न है। वह जमींदारों को खरी–खोटी सुनाने से नहीं कतराता भले ही इस वजह से उसकी बहुत पिटाई भी हो जाती है। फिल्म के लिए कहानी में जो भी बदलाव किये गये हैं, वह मूल कहानी से बहुत दूर नहीं जाते बल्कि उसमें निहित संकेतों का विस्तार ही करते हैं। हां, यह अवश्य है कि कहानी में निहित विद्रुपता और विडंबना को फिल्म में काफी हद तक व्यंग्य और विरोध में बदल दिया गयाहै।

दसारि नारायण राव ने तेलुगु में सबसे अधिक फिल्मों का निर्देशन किया है। उनकी कुछ प्रमुख फिल्में हैं,'मेघ संदेशम', 'तंद्रा पपरायुडु तेलुगु के एक अन्य लोकप्रिय फिल्मकार रामगोपाल वर्मा की पहली फिल्म 'शिवा' को काफी लोकप्रियता मिली। रामगोपाल वर्मा ने बाद में तेलुगु और हिंदी में कई फिल्में बनायीं। चिरंजीव, नागार्जुन, वेंकटेश, प्रभास तेलुगु के लोकप्रिय कलाकार हैं।

कन्नड़ सिनेमा

दक्षिण की बहुत सी महत्त्वपूर्ण फिल्में कन्नड़ में बनी हैं। कन्नड़ फिल्मों की शुरुआत 1934 में हुई जिसका नाम था, 'सती सुलोचना'। कन्नड़ सिनेमा के लोकप्रिय अभिनेता थे, राजकुमार। 1972 में 'वंशवृक्ष' फिल्म बनायी गयी थी जिसे राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था। यह फिल्म एस एल भैरप्पा के उपन्यास पर आधारित थी और इसका निर्देशन गिरीश कर्नाड और बी वी कारंथ ने मिलकर किया था। बी वी कारंथ ने शिवराम कारंथ के उपन्यास पर 'चोमना दुडी' फिल्म बनायी थी और इसे भी राष्ट्रीय पुरस्कार मिला था। गिरीश कर्नाड ने 'कादु', 'चेलुवी', 'तब्बालियू नीनदे मगने' फिल्म का निर्देशन किया था। गिरीश कासरवल्ली को कन्नड़ की चार फिल्मों के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था। ये हैं, 'घटश्राद्ध' (1977), 'तबरना कथे' (1986), 'ताई साहिबा' (1997) और 'द्वीपा' (2002)। राजकुमार, विष्णुवर्धन और अंबरीश कन्नड़ सिनेमा के प्रख्यात अभिनेता थे। शंकर नाग और अनंत नाग भी कन्नड़ के लोकप्रिय अभिनेता थे। इसी तरह बी सरोजा देवी तेलुगु फिल्मों की प्रख्यात अभिनेत्री थीं जिन्होंने हिंदी फिल्मों में भी काम किया था। प्रकाश राज भी कन्नड़ के लोकप्रिय अभिनेता हैं।

कन्नड़ में रचनात्मक और कलात्मक फिल्म बनाने वालो में गिरीश कासरवल्ली, गिरीश कर्नाड, जी वी अय्यर थे। जी वी अय्यर ने 1983 में पहली संस्कृत फिल्म 'आदि शंकराचार्य' बनायी थी जिसे सर्वश्रेष्ठ फिल्म का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था।हिंदी की प्रख्यात फिल्म 'गर्म हवा' के निर्देशक एम एस सथ्यु ने कन्नड़ फिल्मों का निर्देशन किया है। 'कन्नेश्वर रामा' (1977), 'चितुगे चिंते' (1978), 'बारा' (1980) आदि। 'बारा' को उन्होंने सूखा नाम से हिंदी में भी बनायी थी।

मलयालम सिनेमा

केरल में मूक फिल्मों की शुरुआत 1928 में हुई थी और वह फिल्म थी, 'विगतकुमारन' जिसका निर्देशन जे सी डैनियल ने किया था। मलयालम की पहली सवाक फिल्म का नाम था, 'बालन' जो 1938 में बनी थी। इसके निर्माता टी आर सुंदरम थे और निर्देशक थे, एस नोट्टनी। शुरुआत में मलयालम में धीमी गति से फिल्में बनीं। मलयालम की फिल्में सामाजिक विषयों और समस्याओं पर ज्यादा केंद्रित होती हैं। 1951 में बनी जीवन नौका संयुक्त परिवार की समस्याओं पर आधारित थी। मलयालम सिनेमा का संबंध साहित्य से काफी गहरा रहा है। रामू कार्याट ने 1965 में 'चेम्मीन' फिल्म बनायी थी जो शिवशंकर पिल्लै के उपन्यास पर आधारित थी। एक अन्य फिल्म 'नीलक्कुयिल' उरूब की कहानी पर आधारित प्रभावशाली फिल्म थी और निर्देशन किया था, पी भास्करन और राम कार्याट ने मिलकर। के एस सेतुमाधवन ने 'ओडयिल नेनु','यक्षी', 'कदलिप्पणम' आदि फिल्मों का निर्देशन किया था। ए विन्सेंट जो मूल रूप में सिनेमेटोग्राफर थे, उन्होंने 20 मलयालम फिल्मों का निर्देशन भी किया। इनमें 'भार्गवी निलयम्', 'मुरप्पेण्णु', 'तुलाभरम', 'असुरवितु' उनकी चर्चित फिल्में हैं। मलयालम के चर्चित लेखक एम टी वासुदेवन नायर जो कहानी और उपन्यास लेखक के रूप में जाने जाते हैं उन्होंने कुछ फिल्मों का निर्देशन भी किया जिनमें 'निर्माल्यम', 'मोहिनीयाट्टम', 'वंधनम', 'वरिकुझी', 'मंजु', 'कडवु'आदि महत्वपूर्ण हैं। एक अन्य फिल्मकार जॉन एब्राहम ने वृत्तचित, तमिल और मलयालम फिल्मों का निर्देशन किया था।

मलयालम के सर्वाधिक प्रख्यात फिल्मकार हैं, अदूर गोपालकृष्णन जिनकी फिल्मों को कई राष्ट्रीय पुरस्कार मिले हैं। उनकी कुछ प्रमुख फिल्में हैं :'स्वयंवरम' (1972), 'कोडियेट्टम', 'एलिपत्तायम', 'मुखामुखम', 'अनंतरम', 'मतिलुकल विधेयन'। एक अन्य प्रख्यात फिल्मकार जी अरविंदन की कुछ प्रमुख फिल्में हैं : 'कांचनसीता', 'तम्पु', 'कुमाट्टी', 'इस्थप्पन', 'पोकवेयिल','चिदंबरम', 'ओरिडत्त' और 'वास्तुहारा'।

मलयालम के कुछ अन्य फिल्मकार हैं :पद्मराजन पिल्लै, पी एन मेनन, के जी जॉर्ज, वी के पवित्रन, के आर मोहनन, टी हरिहरन, बालचंद्र मेनन, लेलिन राजेंद्रन, टी वी चंद्रन, बी जी भारतन, आई वी शशि, प्रियदर्शन, पी टी कुन्ही मोहम्मद। प्रेम नजीर, शारदा, मोहनलाल आदि मलयालम के लोकप्रिय अभिनेता हैं।

3.5 पूर्व भारतीय भाषाओं का सिनेमा

पूर्वी भारत की जिन भाषाओं में फिल्में बनी हैं उनमें बांग्ला, उड़िया, असमिया, मणिपुरी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनमें भी सिनेमा की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण भाषा बांग्ला है जिसने भारत के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण फिल्मकार दिये हैं।

बांग्ला सिनेमा

बंगाल में मूक सिनेमा के दौर में फिल्में बननी शुरू हो गयी थी। 1931 में ही बांग्ला में पहली सवाक फिल्म 'जमाई षष्ठि' के नाम से बनी थी जिसका निर्माण मदन थियेटर ने किया था। इस फिल्म का निर्देशन अमर चौधरी ने किया था। इसी वर्ष एक अन्य बांग्ला फिल्म न्यू थियेटर्स द्वारा बनायी गयी थी जिसका नाम था, 'देना पावना' और जिसका निर्देशन प्रेमांकुर अटोर्थी ने किया था।बंगाल में बनने वाली 1947 से पहले की कुछ प्रमुख फिल्मों का उल्लेख पहले किया जा चुका है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बांग्ला सिनेमा को शिखर पर ले जाने वाले प्रमुख फिल्मकारों में सत्यजित राय, ऋत्विक घटक और मृणाल सेन का नाम खासतौर पर लिया जा सकता है। इसके अलावा तपन सिन्हा, अजय कार आदि और भी कई फिल्मकार थे जिन्होंने बेहतरीन फिल्में दी हैं।

सत्यजित राय न केवल बांग्ला बल्कि भारतीय सिनेमा के सर्वोच्च फिल्मकार माने जाते हैं। भारतीय फिल्मकारों में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जितनी ख्याति सत्यजित राय को मिली है, उतनी ख्याति किसी और को नहीं मिली है। उनकी अधिकतर फिल्में साहित्यिक कृतियों पर आधारित हैं। 'सद्गति' और 'शतरंज के खिलाड़ी' को छोड़कर उनकी शेष सभी फिल्में बांग्ला भाषा में हैं। ये दोनों फिल्में हिंदी में हैं और प्रेमचंद की इन्हीं नाम की कहानियों पर आधारित हैं। उनकी पहली फिल्म 'पथेर पांचाली' जो 1955 में प्रदर्शित की गयी थी, विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय के इसी नाम के उपन्यास पर आधारित है।उनकी अन्य प्रमुख फिल्में हैं : 'अपराजितो', 'जलसाघर', 'अपूर संसार', 'तीन कन्या', 'कंचनजंघा', 'महानगर', 'चारुलता', 'नायक',गोपी गायेन बाघा बायेन', 'अरण्येर दिनरात्रि', 'प्रतिद्वंद्वी', 'सीमाबद्ध', 'अशनि संकेत', 'सोनार केल्ला', 'जनअरण्य', 'हीरक राजेर देशे', 'सद्गति', 'घरे बाइरे', 'गणशत्रु', 'आगंतुक'।

ऋत्विक घटक को फिल्मों का फिल्मकार माना जाता है। उन्होंने बहुत अधिक फिल्में नहीं बनायी है लेकिन जो भी बनायी है वे बांग्ला की ही नहीं भारत की श्रेष्ठ फिल्मों में परिगणित होती है। उनकी फिल्मों में यथार्थवाद के साथ एक तरह के रोमांटिसिज्म को भी देखा जा सकता है। उनकी प्रमुख फिल्में हैं रू'नागरिक', 'अजांत्रिक', 'मेघे ढाके तारा', 'कोमल गांधार', 'सुबर्नरेखा', 'तिताश एकती नदीर नाम', 'जुक्ती तक्को आर गप्पो'।

मृणाल सेन वैसे तो बांग्ला फिल्मकार थे लेकिन उन्होंने हिंदी, उड़िया और तेलुगु में भी फिल्में बनायी हैं। उनकी फिल्मों में हमारे समय का यथार्थ बहुत ही प्रभावशाली रूप में व्यक्त हुआ है। उनकी प्रमुख फिल्में हैं रू 'नील आकाशेर नीचे', 'बैशे श्रवण', 'पुनश्च', 'आकाश कुसुम', 'माटीर मानुष', 'भुवन शोम', 'इंटरव्यू', 'एक अधूरी कहानी', 'कलकत्ता 71', 'पदातिक', 'कोरस', 'मृगया', 'ओका उरी कथा', 'परशुराम', 'एकदिन प्रतिदिन', 'अकालेर संधाने', 'खारिज', 'खंडहर', 'तस्वीर अपनी अपनी', 'जेनेसिस', 'एक दिन अचानक', 'महापृथ्वी' और 'अंतरीन'।

इस दौर के प्रमुख कलाकारों में उत्तम कुमार, सौमित्र चटर्जी, अनिल चटर्जी, सुचित्रा सेन, माधवी मुखर्जी, शर्मिला टैगोर, अपर्णा सेन आदि हैं।

इन महान फिल्मकारों के बाद बांग्ला सिनेमा में समानांतर दौर में एक नयी पीढ़ी सामने आयी जिनमें ऋतुपर्णो घोष ('उनीशे एप्रिल', 'हीरेर आंग्टी', 'असुख', 'बाड़ीवाली', 'चोखेर बाली'), बुद्धदेव दासगुप्ता ('दूरत्व', 'बाघ बहादुर', 'अंधी गली', 'अनवर का अजब किस्सा', 'नीम अन्नपूर्णा', 'गृहजुद्ध'), अपर्णा सेन ('36 चौरंगी लेन', 'युगांत', 'सती', 'मिस्टर एंड मिसेज अय्यर', 'पारामितार एक दिन', '15 पार्क एवेन्यु'), उत्पलेंदु चक्रवर्ती ('चोख', 'देबशिशु', 'फांसी', 'छंदनीर', 'प्रसव'), गौतम घोष ('मा भूमि', 'पार', 'अंतर्जली यात्रा', 'पद्मा नदीर मांझीकाल बेला') का नाम लिया जा सकता है। इस पीढ़ी के बांग्ला फिल्मकारों ने बांग्ला के अलावा हिंदी, अंग्रेजी और अन्य भारतीय भाषाओं में भी फिल्में बनायी हैं।

उड़िया सिनेमा

उड़िया की पहली फिल्म 1936 में 'सीता बिबाह' के नाम से बनी थी जिसके निर्माता थे, मोहन सुंदर देवगोस्वामी। बहुत अधिक तो नहीं लेकिन उड़िया में समय–समय पर फिल्में बनती रहीं। मृणाल सेन के निर्देशन में बनी फिल्म 'माटीर मनीषा' का उल्लेख पहले किया जा चुका है जो 1966 में प्रदर्शित हुई थी। उड़िया के प्रमुख फिल्मकारों में बिप्लव रायचौधरी, प्रशांत नंदा, नीरद नारायण महापात्र, मनमोहन महापात्र, अपूर्व किशोर बीर, सुशां मिश्र, साधु मेहर, हर पटनायक विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

बिप्लवराय चौधरी ने बांग्ला और हिंदी में भी फिल्में बनायी हैं। उनकी पहली उड़िया फिल्म 'चिलिका तीरे' (1977) ग्रामीण पृष्ठभूमि पर बनी फिल्म है। उनकी दूसरी फिल्म 'अरण्य रोदन' (1993) आदिवासी जीवन पर आधारित फिल्म है। इनके अलावा 'निर्बाचन' (1994) उनकी बेहतरीन फिल्म है। प्रशांत नंदा अभिनेता और निर्देशक थे। प्रशांत नंदा ने 24 फिल्मों का निर्देशन किया है जिनमें 'शेष श्रेवण', 'हिसाब नकास''स्वप्न सागरा' और 'कालीशंकर' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। नीरद नारायण महापात्र की 'माया मिरिगा' (1983) एक उत्कृष्ट यथार्थवादी और कला फिल्म है। मनमोहन महापात्र की 'शीत राति', 'नीरब झड़', 'क्लांत अपराह्न', 'किछि स्मृति किछि अनुभूति', 'अंध दिगंत'उनकी उल्लेखनीय फिल्म है। अपूर्व किशोर बीर की फिल्म'आदि मीमांसा' को राष्ट्रीय एकता का नरगिस पुरस्कार प्रदान किया गया था।

असमिया सिनेमा

असमिया भाषा की पहली फिल्म 1935 में असमिया के महान लेखक ज्योतिप्रसाद अगरवाला के निर्देशन में बनी थी जिसका नाम था 'जयमती' जो बहुत सफल तो नहीं हुई लेकिन एक उत्कृष्ट फिल्म थी। अगरवाला ने ही 1939 में 'इंद्रमालती' नाम से दूसरी फिल्म बनायी थी। इस फिल्म में उन्होंने अभिनय भी किया था और गाया भीथा। भूपेन हजारिका जो छठे दशक में इप्टा के सक्रिय सदस्य थे, की पहली फिल्म 'एरा बाटुर सुर' (1955) का निर्माण और निर्देशन किया। वह आसाम के चाय बागानों के शोषण पर आधारित एक उल्लेखनीय फिल्म थी। भूपेन हजारिका की एक अन्य फिल्म 'शकुंतला' (1961) को राष्ट्रपति का रजत पदक प्राप्त हुआ था।

भबेंद्रनाथ सैकिया और जाह्नु बरुआ असमिया के दो बड़े फिल्मकार हैं। भबेंद्रनाथ सैकिया की उल्लेखनीय फिल्में हैंरू 'संध्याराग' (1978), 'अनिर्बान' (1981), 'अग्निस्नान' (1985), 'कोलाहल' (1988), 'सारथी' (1992), 'आबर्तन' (1994) और 'इतिहास' (1996)। जाह्नु बरुआ की पहली फिल्म 'अपरूपा' (1982) थी जो राष्ट्रीय फिल्म विकास निगम की आर्थिक मदद से बनी थी। उनकी एक अन्य उल्लेखनीय फिल्म है :'हलधीया चोराहे बऊघान खाय' (पीली चिड़िया खेत में दाना खाती है)। इस फिल्म को कई अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार मिले थे। 'बनानी' (1990), 'फिरिंग्ति' (1992), 'सागरलै बहुदुर'(1995), 'कुहखल' (1998) भी बरुआ की एक उल्लेखनीय फिल्म है। जाह्नु बरुआ ने हिंदी में 'मैंने गांधी को नहीं मारा' फिल्म भी बनायी थी।

संजीव हजारिका असमिया के युवा निर्देशक है जिनकी 'हलधर' (1992), 'मीमांसा' (1994) और 'मत्स्यगंधा' (2000) उनकी उल्लेखनीय फिल्में हैं। सांत्वना बरदोलोइ की 'अद्ज्या'(1996) स्त्री मुक्ति पर उत्कृष्ट फिल्म है। मुनीन बरुआ (हिया दिया निया), मुन्ना अहमद (अंतहीन जात्रा), जतिन बोरा (अधिनायक) कुछ अन्य असमिया फिल्मकार हैं।

उत्तर–पूर्व की भाषाओं में मणिपुरी, कर्बी, बोडो, खासी, मिजो और मोनपा में भी फिल्में बनी हैं।

3.6 पश्चिम भारतीय भाषाओं का सिनेमा

पश्चिम भारत की दो भाषाएं गुजराती और मराठी में फिल्म निर्माण की लंबी परंपरा रही है। इसके अलावा कोंकणी भाषा में भी फिल्में बनती हैं। इस भाग में हम गुजराती और मराठी सिनेमा पर ही विचार करेंगे।

गुजराती सिनेमा

गुजराती की पहली सवाक फिल्म 1932 में 'नरसिंह मेहता' के नाम से बनी। इसके निर्देशक थे, नानुभाई वकील और निर्माण किया था, सागर मुवीटोन ने। गुजराती में इसके बाद फिल्में तो लगातार बनती रहीं लेकिन उनकी संख्या सीमित रही और उल्लेखनीय फिल्में बहुत कम बनीं। 1969 में कांतिलाल राठोड़ ने 'कंकु' नामक फिल्म का निर्देशन किया जो एक बेहतर फिल्म थी। बाबूभाई मिस्त्री ने 1969 से 1984 के बीच एक दर्जन फिल्मों का निर्माण किया। इसी तरह अरुण भट्ट ने 1973 से 1987 के बीच बहुत सी फिल्में बनायीं। गुजराती फिल्में ज्यादातर पारिवारिक किस्म की होती है और सामाजिक–राजनीतिक मसलों से बचकर चलती हैं। इसके अपवाद हैं, केतन मेहता जिन्होंने 'भवनी भवई' फिल्म बनायी जो 1980 में प्रदर्शित हुई और जिसमें सामाजिक यथार्थ को राजनीतिक परिप्रेक्ष्य के साथ पेश किया गया था। यह एक व्यंग्य प्रधान फिल्म थी। केतन मेहता ने बाद में ज्यादातर हिंदी में फिल्में बनायीं।1989 की फिल्म 'पर्सी' भी एक यथार्थवादी फिल्म है और जिसके निर्देशक थे, परवेज मरवान जी। इसी तरह ज्ञान कोरिया द्वारा निर्देशित 'दि गुड रोड' (2013) एक अच्छी फिल्म थी जिसे श्रेष्ठ गुजराती फिल्म का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

मराठी सिनेमा

भारतीय सिनेमा की शुरुआत करने वाले अधिकतर फिल्मकार मराठी थे जिनमें दादा साहब फाल्के, एच एस भाटवेडकर, बाबूराव पेंटर आदि का नाम लिया जा सकता है। गुजराती की तुलना में मराठी सिनेमा का इतिहास ज्यादा उल्लेखनीय रहा है। बाबूराव पेंटर जिन्होंने महाराष्ट्र फिल्म कंपनी की स्थापना की और जिन्होंने वी शांताराम, एस फत्तेलाल, विष्णुपंत दामले जैसे श्रेष्ठ फिल्मकार तैयार किये थे। उन्होंने 1925 में 'सावकारी पाश' नामक मूक फिल्म बनायी थी जो किसानों के शोषण पर आधारित फिल्म थी।

1929 में शांताराम, दामले और फत्तेलाल ने प्रभात फिल्म स्टुडियो की स्थापना की। प्रभात ने मराठी और हिंदी में कई महत्त्वपूर्ण फिल्में बनायी जिनका उल्लेख इकाई के आरंभ में किया जा चुका है।'संत तुकाराम' (1937) पहली भारतीय फिल्म थी जिसे वेनिस फिल्मोत्सव में श्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार मिला था। मराठी फिल्म 'श्यामची आई' पहली भारतीय फिल्म थी जिसे 1954 में सर्वश्रेष्ठ फिल्म का राष्ट्रीय पुरस्कार मिला था।

1942 में वी शांताराम ने राजकमल कलामंदिर नाम से स्टुडियो स्थापित किया था और मराठी और हिंदी में कई उल्लेखनीय फिल्में बनायी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दौर के प्रमुख मराठी फिल्मकारों में वी शांताराम, मास्टर विनायक, भालजी पेंढरेकर, आचार्य अत्रे, सुधीर फडके का नाम उल्लेखनीय है।

1970 के दशक के प्रमुख फिल्मकारों में जब्बार पटेल का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने उंबरठा' नामक फिल्म का निर्माण और निर्देशन किया था। यह फिल्म सुबह के नाम से हिंदी में भी बनी थी। बाबा साहब अंबेडकर के जीवन पर उन्होंने 'डॉ बाबासाहब अंबेडकर' नामक फिल्म बनायी थी जो 1999 में प्रदर्शित की गयी थी। उनकी अन्य प्रमुख फिल्में हैं : 'सिंहासन', जैत रे जैत, सामना, आदि प्रमुख हैं।

2004 में बनी श्वास को भी सर्वश्रेष्ठ फिल्म का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इस फिल्म का निर्देशन संदीप सावंत ने किया था। दादा साहब फाल्के के जीवन संघर्ष पर 2009 में 'हरिश्चंद्र फेक्ट्री' नाम की फिल्म बनाई गयी जो एक श्रेष्ठ फिल्म थी। इस फिल्म का निर्देशन परेश मोकशी ने किया था। उमेश विनायक कुलकर्णी की 'विहिर' और 'देवल', और नागराज मंजुले की 'फंड्री' और 'सैराट' भी उल्लेखनीय मराठी फिल्में हैं। प्रसिद्ध अभिनेता अमोल पालेकर ने भी मराठी, हिंदी और अंग्रेजी में कई फिल्मों का निर्देशन किया है जिनमें उल्लेखनीय हैं : 'आकृत' (1981), 'अनकही' (1985), 'थोड़ा सा रोमानी हो जाये' (1990), 'बांगरवाडी' (1995), 'दायरा' (1996), 'ध्यास पर्व' (2001), 'पहेली' (2005), 'क्वेस्ट' (2006), 'दुमकटा' (2007), 'समांतर' (2009) आदि।

3.7 उत्तर भारतीय भाषाओं का सिनेमा

उत्तर भारतीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों में हिंदी भाषा में बनने वाली फिल्मों के अलावा कश्मीरी, पंजाबी, भोजपुरी, हरियाणवी और राजस्थानी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हालांकि इन भाषाओं में बहुत कम फिल्में ऐसी हैं जिन्हें श्रेष्ठ फिल्म की संज्ञा दी जा सकती है।

पंजाबी सिनेमा

विभाजन से पूर्व पंजाब फिल्म निर्माण का एक बड़ा केंद्र था। हिंदी सिनेमा को कई बड़े फिल्मकार , अभिनेता, संगीतकार, गायक पंजाब की ही देन थे। लाहौर में पंजाबी और उर्दू में कई फिल्में बनती थीं। विभाजन के बाद लाहौर पाकिस्तान का हिस्सा बन गया और अब भारत में पंजाबी फिल्में मुंबई में ही बनती हैं। विभाजन के बाद कुछ मनोरंजन प्रधान और लोकप्रिय फिल्में बनीं। 1969 में 'नानक नाम जहाज' है फिल्म जिसमें पृथ्वीराज कपूर ने काम किया था, काफी पसंद की गयी। इसके एक साल बाद 'नानक दुखिया सब संसार' फिल्म बनी।1980 में बनी 'चन परदेसी' को सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय फिल्म का पुरस्कार जीता। पंजाबी के प्रख्यात कथाकार गुरदयाल सिंह के उपन्यास 'मढ़ी दा दीवा' पर 'मढ़ी दा दीवा' फिल्म बनी जिसका निर्देशन सुरेंद्र सिंह ने किया था। यह 1989 की फिल्म थी। इसके बाद गुरदयाल सिंह के एक अन्य उपन्यास पर 'अन्हे घोड़े दा दान' बनी जो 2011 की फिल्म थी और इसे सर्वश्रेष्ठ निर्देशक का पुरस्कार प्राप्त हुआ।

हिंदी क्षेत्र की भाषाओं में भोजपुरी में काफी फिल्में बनती हैं लेकिन अधिकतर मनोरंजन प्रधान फिल्में ही होती हैं। हरियाणवी और राजस्थानी फिल्में भी मनोरंजन प्रधान फिल्में होती हैं।

3.8 सारांश

एम.ए. हिंदी व्यावसायिक लेखन के पाठ्यक्रम 'सिनेमा लेखन' के पहले खंड 'सिनेमा का इतिहास' की तीसरी इकाई 'भारतीय सिनेमा का इतिहास' का अध्ययन किया है। भारतीय सिनेमा का इतिहास 110 साल पुराना है और यहां 25 से अधिक भाषाओं में फिल्में बनती हैं जिनका विवरण एक इकाई में प्रस्तुत करना संभव नहीं है। इस इकाई में आपने भारत की उन भाषाओं की फिल्मों का ही परिचय प्राप्त किया है जिनमें ज्यादा संख्या में फिल्में बनती हैं और जिनमें केवल मनोरंजन प्रधान फिल्में ही नहीं सामाजिक जागरूकता और कलात्मक उत्कृष्टता की फिल्में भी बनती हैं। इस इकाई में केवल कथा आधारित फिल्मों का इतिहास ही प्रस्तुत किया है। वृत्तचित्र, लघु फिल्म, शैक्षिक फिल्म, एनिमेशन फिल्मों का विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया है।

इस इकाई में सबसे पहले आपने भारत में सिनेमा माध्यम की शुरुआत कैसे हुई इसका परिचय प्राप्त किया है। शुरुआती प्रयास किस तरह के थे उसका भी परिचय दिया गया है।

भारत में पहली फिल्म 1913 में 'राजा हरिश्चंद्र' बनी थी जिसके निर्माता और निर्देशक दादा साहब फाल्के थे। यह एक श्वेत–श्याम और मूक फिल्म थी। 1913 से 1930 तक बनने वाली फिल्में मूक और श्वेत–श्याम फिल्में थीं। कुल 1331 फिल्में इस अवधि में बनी जो बिना आवाज की थीं। लेकिन अब इनमें से दो–चार फिल्में ही सुरक्षित हैं।

1931 में पहली सवाक फिल्म 'आलमआरा' के नाम से बनी जिसके निर्माता और निर्देशक अर्देशिर इरानी थे। मूक फिल्मों को भाषायी आधार पर विभाजित नहीं किया जा सकता। लेकिन सवाक फिल्मों को भाषायी आधार पर विभाजित किया जा सकता है। भारत जैसे बहुभाषी देश में सिनेमा भी कई भाषाओं में बनेगा, यह स्वाभाविक है। इस इकाई में सभी का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करना संभव नहीं है। इसलिए इस इकाई में दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और उत्तर क्षेत्र के आधार पर भागों का विभाजन किया गया है।

दक्षिण क्षेत्र में तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालम भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का परिचय दिया गया है। इसी तरह पूर्व क्षेत्र के अंतर्गत बांग्ला, उड़िया, असमिया भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का परिचय दिया गया है। पश्चिम क्षेत्र में गुजराती और मराठी भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का विवरण दिया गया है और उत्तर क्षेत्र के अंतर्गत पंजाबी भाषा में बनने वाली फिल्मों का विवरण दिया गया है।

इस इकाई में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने सिनेमा माध्यम को प्रोत्साहित करने के लिए जो कदम उठाये गये हैं उनका भी संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

उम्मीद है इस इकाई का अध्ययन करने से आपको हिंदी के अतिरिक्त अन्य को छोड़कर सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों का परिचय प्राप्त हुआ होगा।

बोध प्रश्न

1. सिनेमा माध्यम की शुरुआत कैसे हुई और भारत में सिनेमा निर्माण का उल्लेख कीजिए।
2. आपकी दृष्टि में किस भारतीय भाषा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण फिल्मकार हुए हैं, उनका परिचय दीजिए।
3. मूक सिनेमा का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

4. स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व की सवाक फिल्मों का परिचय दीजिए।
5. दक्षिण भारतीय भाषाओं की फिल्मों का इतिहास प्रस्तुत कीजिए।

3.9 उपयोगी पुस्तकें

- भारतीय साहित्य : महेंद्र मिश्र, 2020, अनामिका प्रकाशन, प्रयागराज।
- भारतीय सिनेमा का सफरनामा : संकलन और संपादन : जयसिंह, 2013, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
- भारतीय सिनेमा का अंतःकरण : विनोद दास, 2003, मेधा बुक्स, दिल्ली।
- भारतीय नया सिनेमा : सुरेंद्रनाथ तिवारी, 1996, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नयी दिल्ली।
- एनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंडियन सिनेमा : संपादक : आशीष राजाध्यक्ष और पॉल विल्मेन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY